न्यायकि सद्धिांत

परचिय

न्यायकि सद्धिांत:

यह सद्धिांत या एक ऐसी स्थतिि है जसिे आमतौर पर न्यायालयों द्वारा लागू और बरकरार रखा जाता है। भारतीय संवैधानकि कानून में भी वभिन्नि न्यायकि सद्धिांत हैं जो समय के साथ न्यायपालकिा द्वारा दी गई व्याख्या के अनुसार वकिसति होते हैं।

इस लेख में कुछ महत्त्वपूर्ण न्यायकि सद्धिांतों पर चर्चा की गई है।

आधारभूत संरचना का सद्धिांत (Doctrine of Basic Structure)

- आधारभूत संरचना के घटकों को भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्पष्ट रूप से परभिाषति नहीं कयिा गया है।
- संसदीय लोकतंत्र, मौलकि अधकिार, धर्मनरिपेक्षता, संघवाद, न्यायकि समीक्षा आदि सभी को न्यायालय भारतीय संवधिान की मूल संरचना के रूप में मानते हैं।
- **मूल:**
  - आधारभूत संरचना सद्धिांत की उत्पत्ति जर्मन संवधिान में पाई जाती है जसिे नाजी शासन के बाद कुछ बुनयिादी कानूनों की रक्षा के लयि संशोधति कयिा गया था।
- **महत्त्वपूर्ण नरि्णय:**
  - वर्ष 1973 के केशवानंद भारती मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने पहली बार फैसला सुनाया कि संसद के पास संवधिान के कसिी भी हस्सि में संशोधन करने की शक्ति है, लेकनि यह "संवधिान की मूल संरचना" को बदल नहीं सकती है।
  - इंदरिा नेहरू गांधी बनाम राज नारायण मामले (वर्ष 1975) में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इसकी पुष्टि की गई थी।
  - सर्वोच्च न्यायालय ने 39वें संशोधन अधनियिम (वर्ष 1975) के उस प्रावधान को अमान्य कर दयिा, जसिमें प्रधानमंत्री और लोकसभा अध्यक्ष से जुड़े चुनावी ववािदों को सभी अदालतों के अधकिार क्षेत्र से बाहर रखा गया था।
  - मूल संरचना सद्धिांत की पुष्टि मनिर्वा मलि्स मामले (वर्ष 1980) और बाद में वामन राव मामले (वर्ष 1981) में की गई थी।
  - इस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने मूल संरचना के सद्धिांत के संबंध में भारत के संवधिान के अनुच्छेद 31A और अनुच्छेद 31B की वैधता की जाँच की।

शक्तियों के पृथक्करण का सद्धिांत (Doctrine of Separation of Powers)

- यह मुख्य रूप से राज्य के वभिन्नि अंगों, कार्यपालकिा, वधिायकिा और न्यायपालकिा के मध्य शक्तियों के वभिाजन को दर्शाता है।
- शक्तियों का पृथक्करण मुख्य रूप से सरकारी शक्तियों के त्रि-सूत्रीकरण को दर्शाता है:
  - एक ही व्यक्ति को राज्य के तीन अंगों में से एक से अधकि का हस्सि नहीं होना चाहयि।
  - एक अंग को राज्य के कसिी अन्य अंग के कार्य में हस्तक्षेप नहीं करना चाहयि।
  - एक अंग को कसिी अन्य अंग को सौंपे गए कार्य नहीं करने चाहयि।
- **संवैधानकि प्रावधान:**
  - भारतीय संवधिान के राज्य के नीति नदिशक सद्धिांतों (DPSP) का अनुच्छेद-50 न्यायपालकिा को कार्यपालकिा से अलग करता है, "राज्य, राज्य की सार्वजनकि सेवाओं में न्यायपालकिा को कार्यपालकिा से अलग करने के लयि कदम उठाएगा और इसके अलावा शक्ति के वभिाजन की कोई औपचारकि प्रक्रयिा नहीं है।"
- **महत्त्वपूर्ण नरि्णय:**
  - राम जवाया बनाम पंजाब राज्य (वर्ष 1955) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा: "भारतीय संवधिान ने वास्तव में पूर्ण कठोरता से शक्तियों के पृथक्करण के सद्धिांत को मान्यता नहीं दी है, लेकनि सरकार के वभिन्नि भागों या शाखाओं के कार्यों को पर्याप्त रूप से वभिदति कयिा है।"
  - इंदरिा गांधी बनाम राज नारायण (वर्ष 1975) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा: "शक्तियों का पृथक्करण संवधिान की मूल संरचना का हस्सि है। गणतंत्र के तीन अलग-अलग अंगों में से कोई भी दूसरे को सौंपे गए कार्यों को नहीं कर सकता है।"

तत्त्व और सार का सद्धिांत (Doctrine of Pith and Substance)

- Pith का अर्थ है 'प्रकृति' (True Nature) और Substance का अर्थ है 'किसी चीज का सबसे महत्त्वपूर्ण या आवश्यक हिस्सा'।
- **मूल:**
  - इस सद्धिांत को पहली बार कनाडा के संवधिान में स्वीकार कयिा गया था और भारत में इसे भारत सरकार अधनियिम, 1935 के तहत स्वतंत्रता पूर्व अवधि में अपनाया गया था।
- **प्रयोज्यता:**
  - Pith और Substance के सद्धिांत को आमतौर पर वहाँ लागू कयिा जाता है जहाँ यह नर्धिारति करने का प्रश्न उठता है कि क्या कोई वशिष कानून किसी वशिष वषिय (सातवीं अनुसूची में उल्लखिति) से संबंधति है, ऐसे में न्यायालय मामले के सार को देखता है।
  - वधियकिा की उपयोगति (अनुच्छेद 246) से संबंधति मामलों में इसकी प्रयोज्यता के अलावा Pith और Substance के सद्धिांत को संसद द्वारा बनाए गए कानूनों और राज्य वधिानसभाओं द्वारा बनाए गए कानूनों (अनुच्छेद 254) में प्रतकिूलता से संबंधति मामलों में भी लागू कयिा जाता है।
  - ऐसे मामलों में केंद्र और राज्य वधिानमंडल द्वारा बनाए गए कानूनों के बीच असंगति को हल करने के लयि सद्धिांत को लागू कयिा जाता है।
- **महत्त्वपूर्ण नर्णिय:**
  - प्रफुल्ल बनाम बैंक ऑफ कॉमर्स (वर्ष 1946) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि राज्य का ऐसा कानून, जो उधार दयि गए धन (राज्य का वषिय) से संबंधति है, केवल इसलयि कि यह संयोग से प्रॉमसिरी नोट को प्रभावति करता है, अमान्य नहीं है।

आकस्मकि या सहायक शक्तयिों का सद्धिांत

(Doctrine of Incidental or Ancillary Powers)

- यह तत्त्व और सार के सद्धिांत के अतरिक्ति व्याख्या से वकिसति हुआ है।
- इस सद्धिांत को तब लागू कयिा जाता है जब किसी मामले या प्रश्न में प्रमुख वधियिों की सहायता करने की आवश्यकता होती है।
- Pith और Substance का सद्धिांत केवल वषियों से संबंधति है, लेकनि आकस्मकि या सहायक शक्तयिों का सद्धिांत ऐसे वषियों और उनसे जुड़े मामलों पर कानून बनाने की शक्ति से संबंधति है।
- **मूल:**
  - इस सद्धिांत का वकिास अंग्रेज़ी कोर्ट ऑफ अपील के "R. v. Waterfield (वर्ष 1963)" से संबंधति नर्णिय से हुआ है।
- **संवैधानकि प्रावधान:**
  - अनुच्छेद 4, अनुच्छेद 2 और 3 के तहत राज्यों के नाम बदलने हेतु प्रदत्त कानून के पूरक और प्रासंगकि मामलों पर कानून में परविर्तन करने की शक्ति के बारे में बात करता है।
  - अनुच्छेद 169 राज्यों में वधिानपरषिदों के उन्मूलन या नर्मिाण पर संसद को दी गई शक्ति के बारे में बात करता है, "जैसा कि कानून के प्रावधानों को प्रभावी करने के लयि आवश्यक हो सकता है और इसमें ऐसे पूरक, आकस्मकि और परणिामी प्रावधान भी शामलि हो सकते हैं जनि्हें संसद आवश्यक समझे।"
- **महत्त्वपूर्ण नर्णिय:**
  - राजस्थान राज्य बनाम जी चावला (वर्ष 1958) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा: "वधिि के वषिय पर कानून बनाने की शक्ति के साथ उससे जुड़े सहायक मामले पर कानून बनाने की शक्ति भी होती है जसिे उपर्युक्त कानून बनाने की शक्ति में ही शामलि कयिा जा सकता है।"

वच्छिेदनीयता का सद्धिांत (Doctrine of Severability)

- इसे पृथक्करणीयता के सद्धिांत के रूप में भी जाना जाता है और यह नागरकिों के मौलकि अधकिारों की रक्षा करता है।
- संवधिान के अनुच्छेद 13 के खंड (1) के अनुसार, यदि भारत में लागू कोई भी कानून मौलकि अधकिारों के प्रावधानों से असंगत है तो वसिंगति की उस सीमा तक वे शून्य होंगे एवं संपूर्ण कानून/अधनियिम को अमान्य नहीं माना जाएगा, बल्कि केवल वे प्रावधान जो मौलकि अधकिारों के अनुरूप नहीं हैं, वे अमान्य होंगे।
- **सीमा:**
  - यदि कानून का वैध और अमान्य भाग आपस में इतना अधकि मलिा हुआ हो कि उसे अलग नहीं कयिा जा सकता है तो पूरा कानून या अधनियिम अमान्य हो जाएगा।
- **मूल:**
  - सेवरेबलिटिी का सद्धिांत नॉर्डेनफेल्ट बनाम मैक्समि नॉर्डेनफेल्ट गन्स एंड एम्युनशिन कंपनी लमिटिेड के मामले में इंग्लैंड से वकिसति हुआ है, जहाँ यह मुद्दा एक ट्रेड क्लॉज़ से संबंधति था।
- **महत्त्वपूर्ण नर्णिय:**
  - ए.के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य (वर्ष 1950) में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि संवधिान के असंगत होने की स्थति में अधनियिम का केवल ववािदति प्रावधान ही शून्य होगा, संपूर्ण अधनियिम नहीं और जतिना हो सके अधनियिम को बचाने के लयि हरसंभव प्रयास कयिा जाना चाहयि।
  - बॉम्बे राज्य बनाम एफ.एन. बलसारा (वर्ष 1951) मामले में बॉम्बे प्रोहबिशिन एक्ट की आठ धाराओं को अमान्य घोषति कर दयि गया। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि जो हिस्सा मौलकि अधकिारों की सीमा तक अमान्य था, उसे बाकी अधनियिम से अलग कयिा जा सकता है।

आच्छादन का सद्धिांत (Doctrine of Eclipse)

- यह तब लागू होता है जब कोई कानून/अधिनियम मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है।
- ऐसे मामले में मौलिक अधिकार अधिनियम पर भारी पड़ जाता है और इसे अप्रवर्तनीय बना देता है लेकिन यह प्रारंभ से ही शून्य नहीं होता।
- यदि मौलिक अधिकारों द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों को हटा दिया जाए तो उन्हें सुदृढ़ किया जा सकता है।
- यह सिद्धांत केवल नागरिकों के लिये निष्क्रिय स्थिति में रहते हैं, लेकिन ऐसे गैर-नागरिकों के खिलाफ संचालित होते रहते हैं, जिन्हें मौलिक अधिकारों प्राप्त नहीं होता है।
- **संवैधानिक प्रावधान:**
  - आच्छादन का सिद्धांत भारतीय संविधान के अनुच्छेद 13(1) में निहित है। आच्छादन का सिद्धांत संविधान के बाद बनने वाली विधियों पर लागू नहीं होता है।
- **महत्त्वपूर्ण निर्णय:**
  - यह निर्णय भारत में पहली बार भीकाजी नारायण धाकरा बनाम मध्य प्रदेश राज्य (वर्ष 1955) मामले में सुनाया गया था, जहाँ मध्य प्रांत और बरार मोटर वाहन (संशोधन) अधिनियम, 1947 में प्रांतीय सरकार को संपूर्ण प्रांतीय मोटर परिवहन व्यवसाय लेने का अधिकार दिया गया था, जो अनुच्छेद 19(1)(छ) का उल्लंघन है।
  - सुप्रीम कोर्ट ने माना कि आक्षेपित कानून को कुछ समय के लिये मौलिक अधिकार द्वारा आच्छादित (Eclipsed by the Fundamental Rights) कर लिया गया था।

प्रादेशिक गठजोड़ का सिद्धांत (Doctrine of Territorial Nexus)

- इसमें कहा गया है कि राज्य विधानमंडल द्वारा बनाए गए कानून राज्य के बाहर लागू नहीं होते हैं, जब तक कि राज्य और विषय-वस्तु के बीच पर्याप्त संबंध न हो।
- **संवैधानिक प्रावधान:**
  - यह सिद्धांत भारतीय संविधान के अनुच्छेद 245 से अपनी शक्ति प्राप्त करता है।
  - अनुच्छेद 245 (2) में यह प्रावधान है कि संसद द्वारा बनाया गया कोई भी कानून इस आधार पर अमान्य नहीं होगा कि इसका अतिरिक्त-क्षेत्रीय संचालन होगा यानी यह भारत क्षेत्र के बाहर प्रभावी होगा।
- **महत्त्वपूर्ण निर्णय:**
  - ए.एच. वाडिया बनाम आयकर आयुक्त (वर्ष 1948) मामले में यह माना गया था कि किसी सर्वोच्च विधायी प्राधिकरण की वैधता पर प्रश्न उठाने के आधार पर अधिनियमन की अतिरिक्त क्षेत्रीयता का प्रश्न कभी नहीं उठाया जा सकता है।
  - बॉम्बे स्टेट बनाम आरएमडीसी (वर्ष 1952) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि बॉम्बे विधायिका को प्रतिवादी पर कर लगाने में सक्षम बनाने के लिये एक पर्याप्त प्रादेशिक गठजोड़ मौजूद था क्योंकि सभी गतिविधियाँ जो कि प्रतियोगी से आमतौर करने की उम्मीद की जाती है, वे बॉम्बे में हुईं।

छद्मता का सिद्धांत (Doctrine of Colourable Legislation)

- इस सिद्धांत को "संविधान के साथ धोखाधड़ी" भी कहा जाता है।
- छद्मता का सिद्धांत तब लागू होता है जब किसी विधायिका के पास किसी विशेष विषय पर कानून बनाने की शक्ति नहीं होती है लेकिन फिर भी वह अप्रत्यक्ष रूप से उस पर कानून बनाती है।
- इस सिद्धांत को लागू करने से आक्षेपित विधान के भविष्य का निर्णय होता है।
- **मूल:**
  - इस सिद्धांत की उत्पत्ति एक लैटिन कहावत से हुई है, जिसका इस संदर्भ में अर्थ है: "जो कुछ भी विधायिका प्रत्यक्ष रूप से नहीं कर सकती, वह अप्रत्यक्ष रूप से भी नहीं कर सकती"।
- **संवैधानिक प्रावधान:**
  - यह सिद्धांत आमतौर पर अनुच्छेद 246 पर लागू होता है जिसने संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के तहत विभिन्न विषयों को रेखांकित करके संसद एवं राज्य विधानसभाओं की विधायी क्षमता का सीमांकन किया है।
- **सीमा:**
  - इस सिद्धांत का वहाँ कोई अनुप्रयोग नहीं है जहाँ एक विधायिका की शक्तियाँ किसी संवैधानिक सीमा से बँधी नहीं हैं।
  - यह अधीनस्थ विधान पर भी लागू नहीं होता है।
- **महत्त्वपूर्ण निर्णय:**
  - आर.एस. जोशी बनाम अजीत मिल्स (वर्ष 1977) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि "बल/शक्ति के विधान में, प्रशासनिक बल पर छद्म अभ्यास अथवा जबरन वसूली या संविधान में लिखी गई बातों को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करना आदि ऐसी अभिव्यक्तियाँ हैं जो केवल यह दर्शाती हैं कि विधानसभा एक विशिष्ट कानून को अधिकृत करने के मामले में दक्ष नहीं है, भले ही उस पर योग्यता का निशान लगाया गया हो, और कुल मिलाकर यह छद्म अधिनियमन है।"

प्रसादपर्यंत का सिद्धांत (Doctrine of Pleasure)

- **मूल:**
  - प्रसादपर्यंत के सिद्धांत की उत्पत्ति अंग्रेज़ो के कानून से हुई जिसके अनुसार, एक सिविल सेवक क्राउन के प्रसादपर्यंत पद धारण करता है।
- **संवैधानिक प्रावधान:**

- अनुच्छेद 155 के अनुसार, किसी राज्य के राज्यपाल को राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है और वह राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत पद धारण करता है।
- अनुच्छेद 310 के तहत सिविल सेवक (रक्षा सेवाओं, सिविल सेवाओं, अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्य या केंद्र/राज्य के तहत सैन्य पदों या सिविल पदों पर नियुक्त व्यक्ति) राष्ट्रपति या राज्यपाल के प्रसादपर्यंत जैसा भी मामला हो, पद धारण करते हैं।

- **सीमा:**
  - अनुच्छेद 311 इस सिद्धांत पर प्रतिबंध लगाता है और सिविल सेवकों को उनके पदों से मनमानी बर्खास्तगी के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करता है।
- **महत्त्वपूर्ण निर्णय:**
  - बिहार राज्य बनाम अब्दुल मजीद (वर्ष 1954) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि अंग्रेज़ी कानून को पूरी तरह से और इसके सभी कठोर निहितार्थों के साथ नहीं अपनाया गया है।
  - भारत संघ बनाम तुलसीराम पटेल (वर्ष 1965) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि "प्रसादपर्यंत सिद्धांत" न तो सामंती युग का अवशेष था और न ही यह ब्रिटिश क्राउन के किसी विशेषाधिकार पर आधारित था, बल्कि सार्वजनिक नीति पर आधारित था।

सामंजस्यपूर्ण निर्माण का सिद्धांत

(Doctrine of Harmonious Construction)

- सामंजस्यपूर्ण निर्माण शब्द का तात्पर्य ऐसे निर्माण से है जिसके द्वारा किसी अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के बीच सामंजस्य या एकता स्थापित की जाती है।
- जब वैधानिक प्रावधान के शब्द एक से अधिक अर्थ रखते हैं और संदेह है कि कौन सा अर्थ प्रबल होना चाहिये, तो उनकी व्याख्या इस तरह से होनी चाहिये कि प्रत्येक का एक अलग प्रभाव हो, न की बेमानी या शून्य हो।
- **मूल:**
  - कई मामलों में अदालतों द्वारा दी गई व्याख्याओं के माध्यम से सामंजस्यपूर्ण निर्माण का सिद्धांत उत्पन्न हुआ है।
  - सिद्धांत के विकास का मूल आशय शंकरी प्रसाद बनाम भारत संघ मामले के ऐतिहासिक निर्णय के साथ भारत के संविधान में किये गए पहले संशोधन से लगाया जा सकता है।
- **सामंजस्यपूर्ण निर्माण के नियम का सिद्धांत:**
  - सीआईटी बनाम हिंदुस्तान बल्क कैरियर्स (वर्ष 2003) के ऐतिहासिक मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने सामंजस्यपूर्ण निर्माण के नियम के पाँच सिद्धांत निर्धारित किये:
    - न्यायालयों को विरोधाभासी प्रावधानों के टकराव से बचना चाहिये और उन्हें विरोधाभासी प्रावधानों को समझना चाहिये।
    - एक खंड के प्रावधान का इस्तेमाल दूसरे में निहित प्रावधान को शून्य करने के लिये नहीं किया जा सकता है, जब तक कि न्यायालय सभी प्रयासों के बावजूद अपने मतभेदों को सुलझाने का कोई रास्ता नहीं ढूँढ पाता है।
    - जब विरोधाभासी प्रावधानों में मतभेदों को पूरी तरह से सुलझाना असंभव होता है तो अदालतों को उनकी व्याख्या इस तरह से करनी चाहिये ताकि दोनों प्रावधानों का यथासंभव प्रभाव स्थापित किया जा सके।
    - न्यायालयों को यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि वैसी व्याख्या जो एक प्रावधान को शून्य तक कम कर देती है, सामंजस्यपूर्ण निर्माण नहीं है।
    - सामंजस्य स्थापित करना किसी वैधानिक प्रावधान को नष्ट करना या उसे निष्फल करना नहीं है।
- **महत्त्वपूर्ण निर्णय**:
  - केरल शिक्षा विधेयक 1951 के मामले में यह माना गया था कि मौलिक अधिकारों को तय करने में अदालत को निदेशक सिद्धांतों पर विचार करना चाहिये और सामंजस्यपूर्ण निर्माण के सिद्धांत को अपनाना चाहिये एवं दोनों संभावनाओं के मध्य एक संतुलन बनाकर जितना संभव हो कानून को उतना प्रभाव दिया जाना चाहिये।
  - ईस्ट इंडिया होटल्स लि. बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (वर्ष 2001) मामले में यह माना गया कि एक अधिनियम को समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिये। विभिन्न प्रावधानों के मध्य सामंजस्य बनाना है और उन सभी को प्रभाव देना है।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/judicial-doctrines